॥ वीर वेलू तम्पी ॥

(जीवनी)

4781
4701

लेखक
पी. जी. वासुदेव

Price Re. 1

विद्यार्थी मित्रम बुक डिपो,
कोट्टयम ।

4781

केरल हिन्दी सीरीज़ ११

॥ वीर वेलू तम्पी ॥

(जीवनी)

4781

लेखक :

पी. जी वासुदेव ।

1157

मूल्य १. ००

प्रकाशक :

विद्यार्थी मित्रम् प्रेस और बुक डिपो,

बेक्कर रोड, कोट्टयम, केरल प्रांत ।

VIR VELU THAMPI

•

By P. G. VASUDEV

First Edition
May 1957

Second Edition
October 1964

Price Re. 1-00

Rights reserved by the Publishers.

Publishers:
THE VIDYARTHI MITHRAM PRESS & BOOK DEPOT,
KOTTAYAM, KERALA STATE.

Printed at
THE VIDYARTHI MITHRAM PRESS,
KOTTAYAM.

Approved for School Libraries by the Govt. of Kerala.

*O. N. 1327 **1000*

H 781.

वीर वेलू तम्पी

सिंह दुर्ग नाथ

दो शब्द

यह कहना कि भारत वर्ष में राष्ट्रीय आन्दोलन का क्रम केवल राजा राम मोहन राय के समय से चलता है या सब से पहले यह भावना केवल छत्रसाल के मन-में आयी अथवा मीर कासिम ने सर्वप्रथम राष्ट्रीय स्वाभिमान जाग्रत करने का उद्योग किया, पक्षपात—पूर्ण है। फिर भी इस में सन्देह नहीं कि उक्त देशभक्तों ने भी यहाँ हुए राष्ट्रीय आन्दोलनों में अपना हाथ अवश्य बटाया, लेकिन यहाँ से विदेशियों को मार भगाकर देश को स्वतन्त्र करने के महान यत्न में जिन वीर भारतीयों ने अपने प्राण अर्पण किये, उन में केरल के पषशी और तम्पी के नाम भी नहीं भुलाये जा सकते। यह कह कर इनकी अवहेला करना सत्य का उपहास करना होगा कि इन के केवल स्फुट प्रयत्न थे, भारतीय जनता के साथ इनके प्रयत्नों का कोई विशेष संबन्ध नहीं था। पषशी या तम्पी ने केवल अपने गाँवों में किसी के खिलाफ़ कोई मारकाट नहीं मचायी, बल्कि विशाल भारत भूमि से विदेशी अंग्रेज़ों को दूर कर के उसे विपत्ति से बचाने के महान लक्ष्य को सामने रख कर मरहट्टों और पुर्त्तगीज़ों, मद्रासवालों और रुसियों की मदद की प्रतीक्षा करते हुए स्वतन्त्रता का समर छोड़ दिया था। इन में पहला मलबार का शासक था तो दूसरा त्रावनकूर का दलवा—दीवान—था।

दलवा वीर वेलूतम्पी, इस में सन्देह नहीं, संसार के गिने चुने देशभक्त वीरों में असाधारण आदर और ख्याति का अधिकारी था। तम्पी केवल वीर ही नहीं था, बल्कि अग्रिम देशभक्त और पहुँचा हुआ राज-नीतिज्ञ भी था। उसका जीवन वीरता-पूर्ण घटनाओं और निस्वार्थ त्याग से पूर्ण था।

इस पुस्तिका में वीर वेलू तंपी के वीरता-पूर्ण निस्वार्थ जीवन को चित्रित करने का किंचित प्रयास किया गया है। भाषा टूटी फूटी और शैली विछिन्न हो, फिर भी भाव समझने में कोई कठिनाई न होगी, इस आशा से वीर प्रसू भारत माता की गोद में "वीर वेलूतंपी" को सादर समर्पण कर रहा हूँ।

वसन्त भवन, लेखक –
तृकोटित्तानम, चंगनाशेरी, पी. जी. वासुदेव।
२५-४-१९५७.

॥ वीर वेलू तम्पी ॥

आरंभ से ही हिन्दुस्तान में ब्रिटीश राज का विरोध करते हुए अनेक जन-आन्दोलन हुए हैं। वीर वेलूतम्पी, झांसी की रानी लक्ष्मी बाई, पंजाब के श्याम सिंह ऐसे बलिदानी वीरों और वीरांगनाओं के पुण्यचरित इस बात के प्रमाण हैं। ब्रिटीश लोगों की साम्राज्य वादी कूट-नीति को उसके अपने असल रंग में समझ लेनेवाले देश हितैषियों की संख्या भी यहाँ कम नहीं रही। सन् १८४३ दिसंबर तारीख २१ को सिंगपूर में जब कि आरज़ी आज़ाद हिन्द सरकार की स्थापना की गई, पर-सहस्र प्रवासी भारतीयों को संबोधन करते हुए नेताजी सुभाष ने

जो घोषणा की उस में उक्त वीरों का सादर स्मरण किया गया था।

महात्यागी श्री· वेलू तम्पी का—कणक्कु चेम्पकरामन् वेलायुधन् का - जन्म सन् १७६८ आप्रिल तारीख ७ के हस्त नक्षत्र के दिन कन्याकुमारी के निकट "कलकुलम" तालूक में, "तलक्कलम" गाँव के "वलिय वीट" नामी परिवार में हुआ था, जिन्होंने राज्य प्रेम और राज-भक्ति तथा निस्वार्थ जनसेवा के विशिष्ट आदर्श प्रशस्त करते हुए प्राणों की आहुति दी थी। वलिय वीट वंश के लोग उस समय के, प्रसिद्ध "वेणाड", "वल्लियूर" ऐसे राजपरिवारों से पुरुषार्थ-प्रकाशक अनेक उपाधियों और मर्यादाओं को प्राप्त किए थे। उनकी, नीति और न्याय में तत्परता और दीन दारिद्रों के प्रति उदारता सर्व-विदित थी। तम्पी के माता पिता का विश्वास था कि सुख्यात "वेलिमलै" नामक पहाडी के "कुमार-कोइल" नामक मन्दिर में प्रस्थापित भगवान सुब्रह्मण्य की कृपा से ही शिशु का जन्म हुआ है, जिस कारण उन्होंने अपनी सन्तान का नाम वेलायुधन् रखा। सात वर्ष की अवस्था में, जैसा कि उस ज़माने का आम रिवाज़ था, बालक वेलायुधन् को देहाती पाठशाला में पढ़ने केलिए बिठायां गया। पहाडे और गणित सिद्धरूप और अमर कोश; नौ शास्त्र और शतरंज, तर्क और ज्योतिष, आदि विविध

विषय उस समय देहाती पाठशालाओं में ही पढ़ाये जाते थे। थोडे समय के अन्दर बालक वेलायुधन् ने पाठशाला की अपनी पढ़ाई पूर्ण कर के वलियवीट की "कलरी" में जहाँ कि शस्त्रशिक्षा दी जाती थी, भरती होकर शस्त्राभ्यास भी आरंभ कर दिया। द्वन्द्वयुद्ध और युद्ध नीति में तम्पी अतिशय चतुर हो गये।

छोटी उमर ही में विशाल वलियवीट संभाल ने का बड़ा भारी बोझ तम्पी के सिर पर आ गिरा। फिर भी, चूँकि वे शासन-कार्य में दक्ष थे, इस बात में कहने लायक को कठिनाई उनको महसूस नहीं हुई। यही नहीं, अपने शासित वर्ग की श्रद्धा भक्ति के वे अनायास पात्र भी बन गये। वेणाड के तत्कालीन राजा कल्याण चरित का तक नक्षत्रजात महाराजा राम वर्मा ने सन् १७७४ नवंबर तारीख २३ को रामेश्वर की यात्रा की और सेतुस्नान् के अनन्तर जब कि वे वापस लौट रहे थे, उनकी कुछ चीज़ें चोरी गई। चोर असभ्य "मरवजाति" के थे। चोरों का पता लगाने और चोरी की गई चीज़ों को ढूँढ निकाल कर वापस दिलवाने में तम्पी सफल हुए, जिस से वे महाराजा की कृपा के पात्र बन गये। निदान कुछ दिनों के अन्दर तंपी एक "कार्यक्कार" नियुक्त किये गये। आज दिन के तहसीलदार, मजिस्ट्रेट, दारोगा

आदि अनेक कार्यकर्ताओं के उत्तरदायित्व पूर्ण कार्यों को उन दिनों के केवल एक कार्यकार को सम्पन्न करना होता था। "कार्यकार तंपी" की सत्यप्रियता और नीति निपुणता के कारण सब लोग उन्हीं के पास शिकायतें पेश करते थे और आश्वासन पाकर प्रसन्न चित्त लौटते थे। तंपी को तरफ़दारी छू तक न गई थी; कुकर्मी अन्यायी अत्याचारियों और चोर लम्पट डकैतों पर वे आतंक फैलाए थे।

(दो)

वेणाड में आज भी धर्मराजा के उपनाम से प्रख्यात स्वर्गीय महाराजा राजवर्मा का नाम बडी श्रद्धाभक्ति के साथ लिया जाता है। आप वेणाडी इतिहास के प्रत्येक पाठक के हृदय को भक्तिरस में निमग्न कराने लायक विशिष्ट गुणों से सम्पन्न थे। आप का राजत्व—काल सन् १७५८ से १७४८ तक रहा। मध्यकालीन वेणाड के संस्थापक महाराजा मार्तण्ड-वर्मा के आप भांजे थे। आप बडे समर विदग्ध और सभी कलाओं में निपुण थे। साहित्य में जैसे, आप संगीत, नृत्त आदि में भी अतुल्य पाटवी

थे। घटना प्रधान आप का शासन—काल कई कारणों से महत्वपूर्ण रहा। हैदरखाँ और टिपू सुलतान ने यद्यपि केरल के अन्यान्य प्रदेशों पर अधिकार कर लिया था, फिर भी वेणाड को वे हरा नहीं सके। जब टिपू सुलतान टिड्डी दल के समान अपनी विशाल सेना को लिए केरल के उत्तरी प्रदेशों पर चढ आया तो छोटे बडे के भेदभाव को भूल कर वहाँ के अनेक अमीरों रईसों और सामन्तों राजाओं ने आकर वेणाड के महाराज "धर्म-राजा" की शरण ली। यह बात सुलतान की क्रोधाग्नि में घी का काम कर गई। झट टिपू ने वेणाड पर भी हमला बोल दिया; लेकिन आखिर उसे मुँह की खानी पडी। स्व० महाराजा धर्मराजा के समकालिक कई महा व्यक्तियों ने आप की अतिशय महता के गुण कीर्तन किए हैं। सन् १७४८ जुलाई इक्कीस को दिन के ग्यारह बजे आप का देहाव-सान हो गया।

आप के बाद आप का भांजा महाराज बाल-रामवर्मा सिंहासन पर बैठा। धर्मराजा के सुवर्णोज्वल सुदीर्घ शासन के बाद बालराम वर्मा का जो शासन चला, उसका, वेणाडी इतिहास में एक मन्दप्रभ परिच्छेद के रूप में इतिहासकरों ने वर्णन किय

है । स्टेट मैनुअल के लेखक श्री नागम् अय्याने निम्न प्रकार से उसको चित्रित किया है ।

"तब उसकी उमर केवल सोलह साल की थी । वह राजकुमार स्वभाव से ही दुर्बल और अस्थिरचित्त था ; जिस कारण वह समीपवर्ति नौकर चाकरों और सेवक परिजनों के वशीभूत हो जाता था । उन खुशामदी और स्वार्थी सेवकों में प्रमुख जयन्तन् नम्पूरी" था, जो बडा अज्ञानी और स्वार्थी अपढ़ और लम्पट था । लेकिन वह बड़ा महत्वाकांक्षी था । उसका एक मात्र उद्देश्य था कि मन्त्री वृद्ध राजा केशवदास के विरुद्ध महाराजा के कान भरे और तद्वारा राजा और मंत्री के बीच में विषमता और वैमनस्य पैदा कर दे । इस कूटनीति का, नंपूरी चतुरता के साथ प्रयोग करता रहा, जिस से सिंहासन पर बैठे अधिक दिन नहीं हुए कि महाराजा अत्यावश्यक बातों का भी परामर्श करने केलिये दीवान को अपनी सेवा में उपस्थित होने से रोकने लग गया। जयंतन् नम्पूरी ने अपने लिए प्राप्त राजप्रीति का किसी भी अंश में सदुपयोग नहीं किया। सन् १७११ में नम्पूरी ने राजा को बहका कर एक फ़रमान "तोट्टपाई" नाम से कुख्यात एक दूसरे नम्पूरी के हाथ कोच्चिन के राजा के नाम भिजवा दिया कि सारा "करपुरम" प्रदेश कोच्चिन को वापस

किया जा रहा है, जिस को कि स्व० मार्त्तण्ड वर्मा ने कोच्चिन से अपने राजत्व काल में काट लिया था। नम्पूरी के इस विश्वासघात की खबर जल्दी ही दीवान केशवदास को लगा गई और उन्होंने "तोट्टपाई" को पकड लाने केलिए अपने विश्वस्त गुप्तचरों को तैनात कर दिया। "परवूर की घाई" पार करने से पहिले ही नंपूरी गुप्तचरों के हाथ में पड़ गया और वह फ़रमान उस से हथिया लिया गया, जिस में राजद्रोह का वह लेखन अंकित किया गया था। नंपूरी की दूसरी करतूत यद्यपि इतनी कठोर या बडी नहीं थी फिर भी वह लोगों के मन में सीमातीत कोप और ताप को प्रज्वलित करने में सहायक बन गई। महाराजा नित्यप्रति जिस पालकी में सैर केलिए जाया करते थे, उस में बैठकर एक दिन नम्पूरी अपने आदमियों को साथ लिए सैर करने केलिए निकल पड़ा। लोगों ने समझा कि यह बडे राजद्रोह और अपमान की बात है। राजभक्त राजा केशवदास से वह अन्याय सहा नहीं गया। उन्होंने नंपूरी को समझाया कि उसका काम निन्द्य और हेय और राजद्रोह से संबन्ध रखने वाला समझा जाएगा। बाद में दो एक दिन के अन्दर महाराजा के एक फ़रमान से दीवान केशवदास अपने ही घर में हिरासत

में रखे जाने लगे। यही नहीं, कुछ दिन बाद एक दिन अचानक उनके शय्या-कक्ष में उनकी लाश पडी दिखाई दी.....लोगों में कानाफूँसी होने लगी कि दीवान को नंपूरी ने विष खिलवाकर मरवा डाला है।

धर्मराजा के ईमानदार मंत्रीन्द्र को आप के स्वर्गवास के बाद वर्षभर से अधिक दिनों तक जीते रहने का मौका नंपूरी और उसके सहवर्तियों ने नहीं दिया। सन् १७४५ आप्रिल तारीख २३ के दिन त्रिवेंत्रम में यह दुखद समाचार दावानल ऐसे फैल गया कि दीवान केशवदास का अचानक देहावसान हो गया है। "मैसूर व्याघ्र" टीपू सुलत्तान के कराल वक्त्र से जिन मन्त्री-मण्डल—भास्कर ने वेणाड की रक्षा की थी, उनके प्रति किया गया यह कठोर हाथ वेणाडी इतिहास में सदा सर्वथा अमिट कलंक बना ही रहेगा।

सन् १७४५ आप्रिल तारीख २७ को—राजा केशवदास की मृत्यु के तीसरे दिन जयन्तन् शङ्करन नंपूरी बडे "सर्वाधि कार्यकार" के पद पर, जो कि दीवान के बाद का सब से बड़ा पद था, नियुक्त किया

गया और अविलंब दीवान भी बना दिया गया। दीवान शब्द नंपूरी को उतना अच्छा न लगा, और उसने अपनेलिए पुराना "दलवा" (दीवान) शब्द ही पसंद किया। मदोन्मत्त नंपूरी ने अपनी सहायता केलिए "शङ्कर नारायण चेट्टी" और ठेकेदार "मात्तू-तरकन" को राजधानी में बुला भेजा, जिन में पहला तिरुनेलवेली से तक्कला में आकर बस गया था और दूसरा वेणाड का ही निवासी एक ईसाई था। साथ साथ, जैसा कि मोरणिंगटन साहब ने बताया है, वेणाड का भागधेय अज्ञान, दुराचार और छीना छपटी के हाथ में दब गया।

दलवा नंपूरी ने सब से पहिले स्वर्गीय राजा-केशवदास की सारी धनसम्पत्ति को ज़ब्त करा लिया। कहते हैं, उस दुष्ट ने उन महान पुरुष की धर्म पत्नी के सब के सब जेवरों को भी हथिया लिया। राज-कोश खाली था। अतः नंपूरी धन कमाने के उपायों पर अपने सहयोगियों से परामर्श करने लगा। निदान राज्य के धनिकों को एक एक कर राजधानी में बुला भेज कर दुरमंत्री-त्रयों ने मनमानी रक़म वसूल करनी शुरू कर दी। जिन लोगों ने इनकार किया उन्हें वे कठोर दण्ड दिलवा देने लगे। उनकी दण्ड नीति अतीव

भयंकर और वीभत्स थी। "हाथ पैर बाँध कर मारना पीटना", "झुका कर खड़ा करना", "पीठ पर पत्थर धरना", "मिट्टी ढोहाना", "कोडे लगाना" आदि नम्पूरी की दंड नीति की साधारण से साधारण कार्रवाइयाँ थीं। लोग लज्जा वश और अपमान के कारण कई लोगों ने अपनी अपनी ताकत से ज्यादा पैसा नम्पूरी की भेंट किया। इस सिलसिले में उस ने कलकुलम के कार्यकार वेलूतम्पी से सात हज़ार रुपये माँगे। तम्पी ने विवश होकर तीन दिन की छुट्टी माँग ली और अपने गाँव को वापस लौटे। गाँव में पहुँच कर उन्होंने पैसा कमाने का यत्न नहीं लिया, बल्कि इस दुर्मन्त्री के दुर्मद को दूर करने का उपाय सोचने लगे। उन्होंने गाँव गाँव में सभाएँ बुलायीं और लोगों को, आये दिन राज्य में जो अत्याचार ज़ोर पकड रहे थे, उनकी भयंकरता को अच्छी तरह समझाया, जिस के कारण आबाल-वृद्ध वेणाड क्रुद्ध-क्षुब्ध हो गया।

धर्मराजा रामराजा की लोकान्तर यात्रा के कारण दुःख धूमायित और दीवान केशवदास के असमय में देहावसान से तपित धर्ममंडल वेणाड में नम्पूरी दलवा के कुतन्त्र रूपी झंझावात के झोंकों से अशान्ति की करालाग्नि धधक उठी। घर के घर उमड उठे। दिहाती

और पञ्चायती जमातें जाग उठी। बेकरार हुए नायर लोग पुश्तैनी दुश्मनी और वंशीय प्रवंचना को भुला कर क्षण भर में एक साथ मिल गये। फैज़ी बरदी में अपने को सजाते उन्हें देर न लगी। घर-बार छोड़ दिया, बरछी भाली ले ली और मैदान में आकर कतार-बन्द हुए। "आशान" और "कुरुप" (शस्त्र शिक्षक) "कलरी" का प्रांगन छोड़ कर दौड़ पडे और मैदान में पहुँच कर ही दम लिया। "कुट्टिकाट" वीर अय्यप्पन चेम्पकरामन पिल्लै ने स्वेच्छा से सेनापति का भार ले लिया। आये दिन शासन में हुए परिवर्तनों के कारण "सर्वाधि" का काम छोड़ कर घरेलू तथा सार्वजनिक कार्यों में वह लगा हुआ था। पिल्लै की वह वीर सेना मैदान से आगे निकली, मानों उमड़—घुमड़ कर शोर ज़ोर करती हुई तट प्रदेशों को बहाये लिए आगे बढनेवाली उत्तुंग तरंगें हो। दाक्षिण—पश्चिम घूम वह सेना "केरलेश्वर" में पहुँची; "संहाररुद्र" की मानता मानी। फिर "शर्करा-मैदान" में आकर कराला काली की बन्दना की। तब काहल बजने लगे; युद्ध भेरी पिटने लगी। नागरिकों और दिहातियों की वह सम्मलित सेना "पेरुंगपी" "चिलंपू" आदि गाँवों से होती हुई "कणियापुरम" पहुँच गई। सायंतन वेला की पीली

धूप में कनकाभा लिए रतीले मैदान को आस्तरण बना कर उन लोगों ने वह रात वहीं बिताई। दूसरे दिन सबेरे ही सबेरे सेना आगे बढी। चारों ओर से शोर ज़ोर के साथ उमड़ घुमड़ कर आगे बढी वह महानदी "पल्लिपुरम" कप़्कूट्टम कुलत्तूर, शीयारम, उल्लूर" आदि गाँवों को पीछे खदेड़ कर "कण्णनमूलै" के दक्षिण की तरफ़ "शीवेली" के मैदान में आकर फैल गई।

इधर वेलूतम्पी के चार दिन के अक्षीण परिश्रम से "नांचनाट" के निवासियों की एक बडी सेना "ताप़्क्कुटी रामपिल्लै के नेतृत्व में "तलक्कुलम' पहुँची। कलकुलम और इरणियल आदि प्रदेशों के लोगों ने उसका अनुसरण किया। तम्पी के यहाँ उन्हें खूब अच्छी तरह भोजन कराया गया। लोगों में अतिशय उत्साह उज्वलित हुआ। एक विराट सम्मेलन किया गया जिस में उस महत्कर्म की कार्य योजना तैयार की गई। गंभीरचित्त वेलूतंपी के उद्बोधक व्याख्यान के प्रवाह—तीर्थ में निमज्जित हुए जन हृदय इष्टदेवी कराला क्राली को सर्वस्व समर्पण कर के उसकी उपासना में बद्धांजलि हो उठ खडे हुए। प्रतापी नायकों के नेतृत्व में जोश में डूबी हुई जनता शुभ मुहूर्त में अत्यन्त आडंबर के साथ तंपी के यहाँ

से त्रिवेंत्रम की ओर निकली। दोनों पार्श्वों में अश्व-रूढ वीर नेता और पीछे आचार दंड-धारी अमीर उमरा और उनके करिंदे तथा आदर सूचक मंगल-दीपों को लिए परिजन यथायोग्य संगठित हुए। उस जलूस ने उत्तेजक भेरी—निनाद के साथ राजपाथ को अलंकृत किया, जिस की, प्रसन्न—चित्त पथिकों ने विजय कामनाएँ कीं। हिन्दू और मुसलमान, गरीब और अमीर सब एक साथ मिले। यही नहीं, वे, आए दिन प्रचलित "मावारतम" और "कणियापुरम" नाम से ख्यात समर गीतों को गाते सुन कर और कदम कदम आगे बढते देख कर मुग्ध हो, जिन गावों और नगरों को तय कर आये थे, वहाँ वहाँ से लोग बडी संख्या में आकर उन लोगों से मिल गए। इस से उन स्वयं-सेवकों की संख्या में अतिश बढ़ती हुई। "पद्मनाभपुरम और कुषित्तुरा" "पारशाला और नेय्याटिंकरा" "नेमम् और करमना" आदि प्रदेशों में रज्यभक्त लोगों ने उनका यथोचित स्वागत किया।

सन् १७७२ सितंबर तारीख छः को सबेरे उक्त दोनों जन—जत्थे राजधानी त्रिवेंत्रम के किले के पूर्वी द्वार पर पहुँच गये। त्रिवेंत्रम के निवासी भी, जो नंपूरी के अत्याचारपूर्ण दुशासन के तंग आ गए थे,

उनके वे भी साथ हो लिए। अपने सहयोगियों के साथ नंपूरी यह सब देख सुनकर घबरा गया और कहीं छिपकर बैठ रहा। महाराज ने दलवा को बुला लाने केलिए आदमी भेजा, पर सिर दर्द और बुखार का बहाना कर आदमी लौटा दिया गया, वह नहीं आया। राजा हताश हो गया। उसने अपने दो विश्वस्त आदमियों को उन जन—जत्थों के पास यह कह कर बिजवा दिया कि प्रजा की किसी भी न्याय संगत मांग को पूरा कर देने केलिए वह तैयार है। जन—नेताओं ने अपनी माँगें पेश करते राजा के पास कहला भेजा कि वह राजा के निर्देश के अनुसार वापस जाने केलिए तैयार हैं, बशते कि शंकरन नंपूरी को दलवा के पद से निकाल देकर काला पानी कर दिया जाय और उनको लिखित में दिया जाय कि किसी भी हालत में वह वापस नहीं बुला लिया जायेगा और यह भी स्वीकार किया जाय कि उसके अत्याचार पूर्ण शासन में जिन तरकन् और चेट्टी ने उसका साथ दिया उन पर खुले मैदान में घोडे चलाये जाएँ और उन के कान काट दिए जाएँ तथा निमक वगैरह नित्यप्रति काम में आनेवाली वस्तुओं पर जो चुंगी वसूल की जा रही है, उसे बन्द कर दिया जाय। राजा ने नेताओं की माँगें पूरी कीं।

उन में ऐसे कुछ लोग थे, जो इन बातों से तृप्त नहीं हुए। उन लोगों ने यह भी प्रस्ताव रखा कि वे तीनों दुष्ट—नंपूरी, तरकन् और चेट्टी--उनके सुपुर्द किये जाएँ। उनका भी प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। निदान मनुस्मृति के विधान के आधार पर नंपूरी का सिर मुड़ाकर उसे काला पानी पर दिया गया। उसी ग्रन्थ के दूसरे विधान के अनुसार तरकन् और चेट्टी के कान काट डाले गये और उन्हें हिरासत में रखा गया। यों तो केवल दो महीने तक चलकर नंपूरी का दुशासन सगा केलिए समाप्त हो गया। लोग प्रसन्न चित्त अपने अपने घर वापस लौट गए।

महाराज ने अय्यप्पन चेम्पकरामन पिल्लै को दलवा के पद पर और वेलू तंपी को "मिर्च-सर्वाधिकार्यकार" के पद पर नियुक्त कर दिया। प्रजा दलवा के शासन में सुखी और स्वतन्त्र थी। लेकिन सन् १८०१ में अचानक उनका देहावसान हो गया तो पारशाला पद्मनाभन चेम्पकरामन पिल्लै दलवा नियुक्त किए गए। मगर चूँकि वे उस पद के योग्य नहीं थे, फिर राज्य में अशांति और अव्यस्था होने लगी। वेलूतंपी उन दिनों आलप्पी में रहते थे।

इस बीच में, कुख्यात संप्रति कुंचुनीलन पिल्लै और मुत्तुपिल्लै तथा वेणाड के नये रजिडेंट मैकाले का "स्थानपति" सुब्बय्यन् एक साथ मिल गये और उन्होंने स्व० राजा केशवदास के छोटे भाई और भांजे को, उन पर राजद्रोह का अपराध लगाकर मरवा डाला। यही नहीं, कुछ दिनों के अन्दर पद्म-नाभन चेम्पक रामन् पिल्लै को दीवान के पद से निकलवा भी दिया। यों दीवान का पद जो फिर से ख़ाली पड़ गया, उस पर सन् १८०२ में मिर्च —सर्वाधि वेलूतंपी नियुक्त किये गये। इस समय वेलू-तंपी की अवस्था केवल छतीस वर्ष की थी।

तीन

मलयालम के समादरणीय उपन्यासकार, सुकवि और सुख्यात लेखक सरदार श्री. के० एम० पणिक्कर जीने वीर वेलूतम्पी का शब्द—चित्र निम्न प्रकार खींचता है—

वह जिस के
दोनों कर—घुटनों तक लटके,
चौडी फूली छाथी,
तेजः पूर्ण नेत्र,
शरीर इस्पात का था
कंधे बैल के से थे

और जो सिंह सा बलवान था
वीर वेलूतम्पी था।
चेहरा लक्ष्मी का आवास था,
उस पर शूरता, कुलीनता,
और दयादि सद्गुण
नाच उठते थे।
कमर में बगल में,
लंबी तलवार लटकती,
उसकी युद्ध प्रियता प्रकट करती थी।
चान्दी की कामदार पगडी सिर पर और
कानों में चमकदार कुंडल पहने,
हाथों में कनक की शृङ्खला बांधे
वह वीर अतुल ख्यात हुआ।

माननीय पणिक्कर जी का उक्त वर्णन अत्यन्त समुचित हुआ है। जिस समय वेलूतंपी ने शासन की बागडोर अपने हाथ में ले ली, राज्य में सब कहीं अशांति और अव्यवस्था की लहरें उमड़ उठी थीं। सरकार को करीब पच्चीस लाख रुपये का ऋण चुकाना शेष था और सरकार का वार्षिक आय था केवल बीस लाख का। टिपू सुलतान का मुकाबला जो राज्य को करना पड़ा, उसकी क्षति की पूर्ति अभी नहीं हो पायी थी। राज्य का यह भारी ऋण राज्यरक्षा में किया गया अतिरिक्त व्यय था। राजा केशवदास के देहावसान के बाद जो असमर्थ

शासन हुआ, उसके कारण राज्य अनाथ और दरिद्र हो गया था। यही नहीं, उन मन्त्रीन्द्र की अपमृत्यु, दुर्मन्त्री और उसके साथियों का देश निकाला, केशवदास के परिवार पर किये गये अत्याचार, ऐसी बातों ने उन हृदयों में बडी अशांति पैदा कर दी थी। नंपूरी दलवा के शासन काल में औद्योगिक मंडल अन्याय और अत्याचार का क्रीडा क्षेत्र बन गया था। काला बाजार और रिश्वत का काला भूत सब कहीं नाच रहा था। राज कर्मचारियों के वेतन में अधिकांश भाग अभी देने को शेष था।

वेलूतंपी ने सब से पहले सरकारी कर्मचारियों के अन्यायपूर्ण व्यवहारों को दूर करने और राज्य की आर्थिक स्थिति सुधारने का यत्न आरंभ कर दिया। दलवा वेलूतंपी ने, जो मुसलमानी नियम और मनुस्मृति में अच्छी जानकारी हासिल किये थे, नीति पालन में उनको अक्षरशः अमल करना आरंभ कर दिया, वे सर्वसाधारण के सामने अत्यन्त भयानक और निष्ठुर चित्रित किये गये। आवारों लंपटों और चोरों डाकुओं केलिए सचमुच वे निष्ठुर ही थे। अपनी नियमित कार्रवाइयों से उन्होंने अन्यायियों और अत्याचारियों का दमन कर दिया। उनकी अतिशय कार्यनिपुणता और क्षमता ने, समझदारी और

साहस ने, राज्य और राज्य भाइयों का हित करने की अभिलाषा ने राज्य की स्थिति में आमूल परिवर्तन कर दिया। प्रत्येक बात में प्रकट उनका उन्नत ध्येय अत्यन्त आदरणीय और उनका पवित्र चरित्र स्वर्गीय था। इतिहासकारों का कथन है कि उन दिनों में वेलूतंपी के ऐसा दूसरा कोई उतना उन्नत चरित्रवान व्यक्ति नहीं था।

नागमय्या के स्टेटमैनुअल के अनुसार वेलूतंपी के अतिशय अमानुषिक अध्यवसायने जल्दी ही राज्य से अन्यायों और अत्याचारों का उच्चाटन कर दिया। उन्होंने राज्य के इस ओर से उस ओर तक घूम कर और स्थान स्थान पर ठहर कर राज्यवासियों की शिकायतें सुन ली और अपराधियों को खुले आम समुचित दंड दिलवा दिया। ऐसे भ्रमणों में खुले मैदानों में विशाल वृक्षों के साये में उनकी कचहरी लगती थी। सारा राज्य वेलूतंपी का नाम सुनने मात्र से कांपने लग जाता था। अनरीतियाँ जल्दी ही अस्त हो गयीं। राज्य में शान्ति स्थापित करने के बाद तंपी ने भूमि की जाँच करायी और प्रत्येक भूमि का कर नियत करा कर पट्टाभी लिखवा दिया। इससे राजकोश की पुष्टि हुई। राज कर्मचारियों के वेतन में जो रकम देनी अभी शेष थी, उसको, और सरकारी ऋण दलवा ने दिलवा

दिया। कोल्लम नगर में नयी दूकानों और कचहरियाँ, मन्दिर और महल बनवा कर उस नगर को सुधारा, जिस से वहाँ के व्यापार और व्यवसाय के कार्यों में बडी उन्नति हुई। आलप्पी के बन्दरगाह और नगर का जीरणोद्धार कराकर वहाँ के व्यापारियों और व्यवसायियों को पर्याप्त सुविधायें प्रदान कीं। चङ्गनाशेरी, तलयोलपरम्पु, माञ्जाली ऐसे गाँवों में प्रति साप्तह हाट लगने की व्यवस्था करायी। पातिरामणल द्वीप को, जो विशाल वेम्पनाट झील के बीच में है और जंगलों और झाड़ियों से घिरा था, काट छांट कर नारियल लगाने और धान बोने योग्य कर दिया। कोल्लम से चेंकोट्टा जाने की जो पुरानी पगडंडी थी, उसे राजपथ का रुप दे दिया। त्रिवेंत्रम में अनेक मंदिरों और महलों को बनवाया। त्रिवेंत्रम के किले के अन्दर जो नये बाज़ार बने, वह भी उन्हीं के यत्न से बने।

वेलुतंपी की निर्दय दण्ड नीति के कारण अनेक लोग उनके शत्रु बन गये। संप्रति कुंचुनीलन पिल्लै और उसके साथियों ने जिन्होंने इस आशा से कि तंपी के दलवा होने पर अपने स्वार्थ की सिद्धी कर पायेंगे उनको दलवा के पद पर नियुक्त कराने का कठोर यत्न किया था, अब उनकी अचंचल धर्म नीति और कर्मनिष्ठा को और नीति के पालन में अनुदार भाव को

देखकर किसी तरह तंपी का काम तमाम करने का निश्चय कर डाला। उन लोगों ने तंपी के दूषणों से राजा के कान भरने आरंभ किये। यहाँ तक कि आखिर राजाज्ञा हुई कि दलवा को कैद कर फांसी पर लटका दिया जाय। इस समय दलवा आलप्पी में ठहरे हुए थे। राजकोष की खबर पाकर वे कोच्चिन गये और रज़िडेंट साहब से मिल कर बातें कीं। साहब ने उन्हें परामर्श दिया कि वे जल्दी ही त्रिवेंद्रम पहुँच जाये और महाराजा के दर्शन कर उनकी गलतफ हमी को दूर करने का प्रयत्न करें। राजा तो षडयंत्रकारियों के जाल में एक दम फँसे थे, जो उन्होंने तंपी को दर्शन देना भी नामंजूर कर दिया। इधर तंपी ने रजिडेंट की मदद से षडयन्त्रकारियों को पकड़ कर कठोर दंड दे दिया। दलवा वेलूतंपी अब निरापद हो गये।

लेकिन षडयंत्रकारियों को इस से शान्ति नहीं मिली। रजिडेंट ने दलवा वेलूतंपी की मदद जो की, उसे महाराजा के प्रति अनादर का प्रमाण सिद्ध-कर, राजा और रजिडेंट के बीच में विषमता पैदा करने का उन लोगों ने अनवरत यत्न किया। राजा ने रजिडेंट की कार्रवाइयों की बड़ी आलोचना करते हुए गवर्णर जनराल के नाम पत्र भेजा। इसलिए

गवर्णर जनराल ने रजिडेंट को कलकत्ते में बुला भेजा और उनसे समक्ष में सारी बातें समझ कर राजा को जवाब दिया कि, आगे से रजिडेंट साहब राजाज्ञा के विरुद्ध कोई कार्रवाई न करेंगे। साथ साथ वेलूतंपी को उन्होंने कुछ बहुमूल्य उपहार भी मिजवा दिये। जो हो, अब राजा ने रजिडेंट के प्रत्येक कार्य में असंतोष प्रकट करना आरंभ कर दिया।

वेलूतंपी ने नीति और न्यायपूर्ण अपना शासन जारी रखा। वे आजन्म ब्रह्मचारी थे। अकेले रहते थे उनका विचार था, कि पारिवारिक जीवन बिताते हुए शासन चलाना राज्य की भलायी केलिए अच्छा नहीं है।

चार

राज्य का आय कम और व्यय अधिक होने के कारण व्यय–नियंत्रण अनिवार्य हो गया। संधि-पत्र के अनुसार कंपनी वालों को जो राजभोग चुकाना था, कई वर्षों से चुकाया नहीं गया था, इधर दलवा वेलूतंपी की निष्ठुर दंड–नीति के कारण राजकर्मचारी जान बूझ कर काम में वेपरवाही और असावधानी का व्यवहार करने लगे। उस समय की परिस्थिति में व्यय में कमती करना ही तंपी को उचित जंचा, जिस से उन्होंने उसकी कार्रवाई शुरू कर दी। पहले पहल यह तय किया गया कि

सिपाहियों के भत्ते में कमती कर दी जाय। इस निर्णय ने सेना को क्षुब्ध कर दिया। मौका पाकर राजकर्मचारियों ने सेना को उसका कर विद्रोह करने केलिए प्रोत्साहित कर दिया। इस ख्याल से कि तंपी "नायर सेना" को विघटित कर देना चाहते हैं, सिपाहियों ने ज़ोर शोर से विद्रोह करना आरंभ कर दिया। इस विद्रोह की लहरें जल्दी ही राज्य भर में व्याप्त हो गयी। उन्होंने ठाने, थाने और जेल खाने के दरवाजे खोल दिये दस हज़ार के करीब सिपाही एक साथ मिल कर राजधानी की ओर बढे। उन्होंने राजा से प्रार्थना की कि तंपी को दीवानी से निवृत्त कर उनकी जगह दूसरे किसी को नियुक्त किया जाये। महाराजा असमंजस में पड़ गये।

इस समय दलवा और रजिंडेट आलप्पी में ठहरे हुए थे। अपने प्राणों की रक्षा करने केलिए वे कोच्चिन को भागे। लेकिन विना विलंब वे ब्रिटीश सेना को साथ लेकर त्रिवेंत्रम लौट आये और विद्रोहियों का दमन कराया और उनके नेताओं को कठोर दंड दिलवा दिया। एक इतिहासकार बताता है कि उनके हुकम से कुछ विद्रोहियों को फ़ांसी पर चढा दिया गया, कुछों को तोप से उड़ा दिया गया और कुछों के सिर काट डाले गये।

इस सैनिक विप्लव की खबर कलकत्ते में जब गवर्णर जनराल वेल्लसली को लग गयी, तो उन्होंने सोचा कि ब्रिटीश शक्ति को वेणाड में सुशक्त करने का यही सुवर्णावसर है। सन् १८०५ में उन्होंने मद्रास के गवर्णर के नाम जो पत्र लिखा उस में यह स्पष्ट कर दिया गया कि सन् १७४५ में लिखे गये संधिपत्र में वेणाड के अन्दरूपी झगडों को दबाने की कोई व्यवस्था नहीं की गयी है और हाल ही में वहाँ जो सैनिक विप्लव हुआ है, जो उस संधिपत्र को दुबारा लिखवाने का अच्छा मौका है। उस में यह दिखाया गया था कि चूँकि ऐसा प्रतीत होता है कि उस सैनिक विप्लव का उद्देश्य वेणाड में ब्रिटीश लोगों का अधिकार नष्ट करना है, इसलिए उसको दबा देना ज़रूरी हो गया है।

उक्त पत्र को नये संधिपत्र की पांडुलिपि के साथ मद्रास के गवर्णर बर्टिंग ने रजिडेंट मैकाले को भिजवा दिया। रजिडेंट ने उसे महाराजा को दिखाया। वह तो नया संधिपत्र लिखाने केलिए तैयार नहीं थे। तम्पी उस धारा को छोड़, जिस में राजभोग की रकम बढा देने का उल्लेख किया गया था, संधिपत्र के शेष अंश को स्वीकार करने को तैयार थे। तम्पी ने देखा कि नये संधिपत्र के अनुसार जो राजभोग देने को बताया गया है, राज्य की शक्ति के बाहर की बात है। लेकिन उस समय तक अंग्रेज़ों की हालत सन् १७४८

की अपेक्षा बहुत कुछ बदल गयी थी। अब वे केवल वणिक नहीं थे, साम्राज्य के नाथ बने हुए थे। तंपी ने यह तथ्य राजा को समझाने का प्रयत्न किया उधर रजिंडेंट राजा को किसी तरह अपनी तरफ़ फोड लेने पर तुला हुआ था। जब उसने देखा कि राजा किसी की मानने केलिए तैयार नहीं होते तो तिरुनल-वेली में पडी ब्रिटीश सेना को इधर भिजवा देने केलिए मद्रास के गवर्णर के नाम पत्र लिखा। तंपी को इसकी खबर लग गयी तो उन्होंने इसका विरोध करते हुए रजिंडेंट से स्पष्ट कह दिया कि ऐसा करना न्याय संगत नहीं है। इस धारा को, कि प्रतिवर्ष आठ लाख रुपया राजभोग के रूप में दिया जाय, अन्यथा राज्य-शासन-भार उठाने केलिए कंपनी वाले विवश होंगे, स्वीकार करने केलिए राजा और दलवा दोनों तैयार नहीं थे। उधर, किसी दलील को माननेवाला रजिडेंट भी नहीं था। बल्कि संधिपत्र को उसी रूप में मनवाने का उसने हठ ठाला। बहुत कुछ कहने सुनने पर आखिर हस्ताक्षर करने केलिए तंपी इस शर्त पर तैयार हुए कि बढाये गये राजभोग को चुकाने पर ज़ोर नहीं दिया जायेगा। महाराजा को भी उन्होंने किसी तरह समझा बुझा कर राज़ी कर लिया।

अंग्रेज़ों की इस कार्रवाई की आलोचना करते हुए प्रसिद्ध इतिहासकार जेंस पिल ने यों लिखा हैं,

"भारत में ब्रिटीश लोगों का राज़ स्थापित करने और उसे बनाये रखने केलिए की गई विवाद-पूर्ण विविध कार्रवाइयों में सब से अधिक अन्यायपूर्ण वेणाड-संबन्धी कार्रवाई है।"

आगे की घटनाओं ने इस बात को स्पष्ट कर दिया कि उस नये संधिपत्र ने राज्य के भविष्य को कहाँ से कहाँ बदल दिया, जिस में राजा या मन्त्री से, उनकी और प्रजा की अनिच्छा और विरोध के होते हुए भी, उसकी बिना परवाह किये, भारत में ब्रिटीश राज को प्रबल करने और उसे यहाँ बनाये रखने के एक मात्र उद्देश्य से हस्ताक्षर कराये गये थे। जो हो, आखिर अंचुतेंगु में संधिपत्र में दोनों की ओर हस्ताक्षर करने और वहीं लेन देन करने का निर्णय किया गया और वहीं पर वह कर्म अतिश्य आडंबर के साथ संपन्न भी हुआ। इस से यह भ्रमपूर्ण धारणा लोगों के बीच में दावाफल ऐसे फैल गयी कि तंपी ने स्वार्थसिद्धि केलिए रजिडेंट से मिल कर राजद्रोह किया है। महाराजा अब तंपी पर अविश्वास करने लगे और उनके बीच में अनबन बढती गयी। तंपी ने राजकर्मचारियों का एक सम्मेलन कर के उन्हें यह समझा कर अपनी निर्दोषिता प्रमाणित करने का विफल यत्न किया कि किन किन परितस्थितियों के दबाव में पड़कर उन्हें

संधिपत्र में हस्ताक्षर करने पडे। उस सम्मेलन में दलवा ने यह भी स्वीकार कर लिया कि बढाया गया राजभोग अन्यायपूर्ण है। लेकिन इस से लोगों की अतृप्ति दूर नहीं हुई, उल्टे उन्होंने दलवा ही को अपराधी ठहराया।

राजभोग बढाया गया तो उसके साथ साथ राज्य का ऋण भी बढने लगा। इस कारण दलवा निरंतर रजिडेंट से प्रार्थना करते रहे कि राजभोग में कमती की जाये। साम्राज्य दुर्मोही मैकाले ने कोई स्पष्ट जवाब न देकर चुप्प साध ली। इधर तम्पी ने जब देखा कि महाराजा और प्रजा की, उनके प्रति अतृप्ति बढ रही है, स्वभावतः उनका उत्साह बढ़ने लगा। इस बीच में "पद्मगर्भ" वगैरह अनेक उत्सव भी संपन्न करने थे, जिस में राजकोश भी खाली पड़ गया। मौका पाकर रजिडेंट ने राजभोग चुका देने पर और ज़ोर दिया। उसने तम्पी की राजभोग कम करने की प्रार्थना अनसुनी कर दी। तम्पी के नाम मैकाले के पत्रों में, अब मान और मर्यादा की उपेक्षा की जा रही थी। संक्षेप में मैकाले और तंपी जो दो एक दिन पहले तक घनिष्ट मित्रता बरतते रहे, अब एक दूसरे के जानी दुश्मन बन गये। विद्रोही अवसरवादी लोगों ने इस से खूब

लाभ उठाया। मैकाले पैसे केलिए तंपी को बुरी तरह तंग करता रहा। यहाँ तक कि एक बार महाराजा के गहने बेच कर राजभोग चुकाया गया। राज्य का ऋण और बढने लगा। मैकाले के विवेक रहित व्यवहार अब तंपी को असह्य होने लगे। रजिडेंट के अन्दर जो "कट्टर ईसाई" छिपा बैठा था, अब उसको भी बाहर आने का मौका मिल गया। उसके भांजे डाक्टर मैकाले और डाक्टर बुकानन, जिन को कि ईसाई धर्म के प्रचार में आवश्यक निर्देश देने के अर्थ अंग्रेज़ अधिकारियों ने खुद इधर भेजा था, और वेणाड में धर्मचार करने केलिए आये रिंकिल टाबी ने मिल कर "मणलाटी" नामक गाँव में एक गिरजा घर बनवाने की आज्ञा माँगते हुए रजिडेंट के द्वारा महाराजा और दलवा तंपी से प्रार्थना की। लेकिन ब्राह्मणों के विरोध से डर कर तंपी ने तुरंत उस प्रार्थना पर कोई कार्रवाई नहीं की। मैकाले बिगड पड़ा। चूँकि अब वह नित्य निरन्तर राजभोग चुकाने पर ज़ोर देने लग गया, इसलिए तम्पी ने विवश होकर राज्यवासियों से पैसा वसूल करना आरंभ कर दिया। ठेकेदार धनकुबेर मात्यू तरकन के हिसाब में एक बडी रकम बच रही थी। तंपी का उद्देश्य मालूम होते ही चतुर

तरकन ने धर्म की आड में रजिडेंट को अपनी तरफ़ फोड़ लिया। मैकाले जो अब "राजभोग राजभोग" चिल्लाता और हर बात में तंपी को तंग करता हुआ उनके पीछे पडा रहता था, यह सुन लेने पर कि वे तरकन के नाम पर भूमि-कर और चुँगी के हिसाब में जो रकम शेष है उसे वसूल करने की कार्रवाइयाँ ले रहे हैं, ऐसा करने से उनको रोका। इस बीच में स्थानपति सुब्बय्यन की अकाल मृत्यु हुई, जो कई भ्रमपूर्ण धारणाओं का कारण बनी। राज्य शासन संबन्धी हर बात में रजिडेंट हाथ डालने लगा, जो तंपी के क्रोधानल को प्रज्वलित करने केलिए सहायक हुआ अब उन से सहा नहीं गया।

तंपी और मैकाले की अनबन की व्याख्या करते हुए एक इतिहासकार यों लिखा है—

रजीडेंट मैकाले के दबाव ही से वेणाड का राजभोग बढा कर दुगुना कर दिया गया था। यह वह ज़माना था जब कि धूर्त वेल्लसली ने उत्तरापथ में राजपूत, मरहट्टे वगैरह प्रबल शक्तियों से लडाई लडकर कंपनी सरकार को एक दम निर्द्धन कर डाला था। यद्यपि ऐसे अनेक कारणों से वेणाड के राजभोग

को दुगुना कर दिया गया था, फिर भी उस में कमती कर देने का बचपन मैकाले ने तम्पी को दे दिया था। तम्पी ने सोचा कि बढ़ाया गया राज-भोग अगर नियम से चुकाया जाय तो संभव है कि उस में फिर कमती न की जाय, बल्कि और बढा दिया जाय, राजभोग जानबूझ कर उन्होंने नहीं चुकाया। इस पर पूछ ताछ, वाद विवाद और अनबन लगी। मैकाले से प्रेरणा पाकर दक्षिण वेणाड में मिशानरियों ने धर्मप्रचार का जो कार्य आरंभ किया, तम्पी को पसन्द नहीं आया। यह बात उसके मन में तम्पी के विरुद्ध विद्वेष को बढाने में सहायक हुई। ऐसे अनेक कारण थे, जिन से उनका विरोध प्रबल होता गया। उन्हीं दिनों में फ्रांसीसी लोग—नेपोलियन के सन्देश वाहक—वेलूतम्पी को अंग्रेज़ों के विरुद्ध उसका रहे थे। ऐसी परितस्थिति में तंपी ने राजभोग नहीं चुकाया, सो इसलिए नहीं था कि चुकाने में वे असमर्थ थे, बल्कि इसलिए कि बढाया गया राजभोग चुकाना ही वे नहीं चाहते थे। और एक कारण यह था कि पहले तो मिर्च के रूप में राज-भोग चुकाया जाता था, लेकिन नेपोलियन से हुए युद्ध के कारण अंग्रेज़ों केलिए यूरोप के सभी बाज़ार बन्द हो गये, उनका पाश्चात्य व्यापार सारा टूट

गया, अतः अब मिर्च खपती नहीं थी। सस्ते से सस्ते में भी वे मिर्च लेने में असमर्थ रहे। संधि-पत्र में बतायी शर्तों के अनुसार मिर्च खरीदने पर तंपी ने ज़ोर दिया; मैकाले ने इनकार किया तो ऐसी हालत में राजभोग चुकाने में तंपी ने भी अपनी असमर्थता स्पष्ट कर दी।

इतना सब कुछ होने पर भी, जब तंपी ने विवश होकर विदेशी कंपनीवालों के विरुद्ध विप्लव आरंभ कर दिया, केवल छः लाख रुपया राज-भोग में चुकाना शेष था; और यह शेष रकम बढाये गये राजभोग में, कंपनी वालों के हिसाब के अनुसार, इतने वर्षों का बाकी था। इतना समर्थ धनकार्य-शासन इसके पहिले दूसरे किसी के मन्त्रीत्व-काल में नहीं हुआ था।

नमक पर कर और चुँगी लगाने पर मद्रास का गवर्णर और मैकाले तंपी पर निरन्तर दबाव डालते रहे। लेकिन नमक ऐसी चीज़ पर, जो जनता के नित्य के खाद्यों में अत्यन्त अपेक्षणीय है, तंपी ने कर या चुँगी लगाने से साफ़ इनकार कर दिया। मद्रास में नमक पर चुँगी लगती थी, जिस कारण नमक वहाँ बहुत माँगा पड़ता था

और वेणाड से, जहाँ वह बहुत सस्ता रहता था, चोरी में मद्रास को खूब जाता था। इस कारण नमक पर चुँगी लगाने पर मद्रासी सरकार तंपी से बार बार आग्रह करती रही। मगर तंपी अपनी बात पर अटल थे।

उन दिनों में अंग्रेज़ों के पैर हिन्दुस्तान में उतने जमे नहीं थे। उन्हें यहाँ और वहाँ अनेक प्रबल शक्तियों का मुकाबला करना पड़ रहा था। दिल्ली-बादशाह का सामन्त पद ही उन्हें यहाँ प्राप्त था। यूरोप में नेपोलियन की विजय ने अंग्रेज़ों को तंगी और तकलीफ़ में गिरा दिया। अमेरीका भी उन से बिगड़ बैठा था। फ्रांसीसी, जो अंग्रेज़ों का अन्त मना रहे थे, मौका पाकर भारत के देशी राजाओं को अंग्रेज़ों के विरुद्ध उसका रहे थे। खुद अंग्रेज़ अपने भविष्य पर आशंका किये थे।

इस बीच में अंग्रेज़ों ने डेच कंपनी के एकाध गिरजे, व्यापारशालायें, किले आदि को अग्नि के सिपुर्द कर दिया, जिस से वे भी उनके शत्रु हो गये। हताश डेच लोग किसी तरह अंग्रेज़ों को यहाँ से भागा कर बाहर करने के उपाय सोच रहे थे। उन्होंने तंपी को नेपोलियन का सहयोग

और सहायता दिलवाने का बचपन दिया। साथ साथ कोच्चिन के दीवान पालियत्तच्चन भी रजिडेंट मैकाले की कूट नीति से अतृप्त हो गये। अच्चन और तम्पी ने मिल कर गर्विष्ट अंग्रेज़ी को एक सीख सिखाने ही की ठानी। इस कार्य में उन्होंने फ्रांसीसियों की सहायता की प्रतीक्षा की। मोरीशियस के फ्रांसीसी अधिकारियों से उन्होंने पत्र व्यवहार आरंभ कर दिया। सन् १८०८ नवंबर के महीने में अरमीनिया के तीन आदमी अंचुतेगुं आ उतरे, जिन्होंने अच्चन और तम्पी से भेंट करके बातें की और युद्ध आरंभ होने पर सहयोग दिलाने का बचपन दिया।

कूटनीतिज्ञ और गर्विष्ट मैकाले की करतूतें राजा को ज़रा भी उचित नहीं जंचती थीं। उन्होंने तीन बार पत्र द्वारा कंपनी वालों से आग्रह किया कि वे इस अयोग्य रेजिडेंट को वापस बुलाये और दूसरे किसी योग्य व्यक्ति को रजिडेंट बना कर इधर भिजवा दें। वेल्लसली ने, जो जिस किसी संभव उपाय से उन सभी राज्यों पर अधिकार कर लेना चाहता था, जिनके साथ अंग्रेज़ों का किसी तरह का व्यापारिक संवन्ध रहा हो, अगर महाराजा की प्रार्थना अस्वीकार कर दी तो इस में क्या ही आश्चर्य है। यह सारी बातें जब मैकाले को मालूम हुई तो उस

का गर्व और स्वार्थ और बढ़ गये। उसने तय किया कि अंग्रेज़ों के स्वेस्छाधिकार और ईसाई धर्म-प्रचार में विघ्नरूप तम्पी को पदच्चुत किया जाना चाहिये। उस ने राजा से आग्रह किया कि तुरन्त तम्पी को काम से निवृत्त किया जाय और तम्पी को आदेश दिया कि वे मासिक पाँच सौ रुपया पेशन लेकर "चिरक्कल" जाकर ब्रिटीश राज में शेष जीवन बितायें। लेकिन, अब तक राजा को तम्पी की नीतिनिष्ठा और राज्यस्नेह में पूरा विश्वास हो गया था, अत: उनको काम से निकाल देना बिलकुल नहीं चाहते थे।

पाँच

वेलूतंपी और पालियत्तच्चन दोनों मिल कर गुप्त-रूप से सेना संगठित करते रहे। दोनों वीर-देश-भक्तों के शत्रु कम या नगण्य नहीं थे। लेकिन तंपी विरोध को देख कर सहम जाने वालों में नहीं थे। उन्होंने कालिकट के सामूतिरी और फ्रांसीसी अधिकारियों से सहायता केलिए प्रार्थना की और उन से प्रोत्साहवर्द्धक पत्रोत्तर पाने से प्रसन्नचित्त हो युद्ध की तैयारियाँ जारी रखीं। उधर इस सब की खबर मैकाले को मिलती रही और वह भय भीत होकर कोच्चिन ही में छिप कर पड़ा रहा। उसने

कंपनी को लिखा कि एक बडी सेना विद्रोहियों का दमन करने केलिए भेज दी जाय।

इधर तंपी ने मैकाले के नाम एक पत्र लिखा, इस बहाने से कि वह रजिडेंट की तैयारियाँ देख कर डर गये हैं। उन्होंने यह भी लिखा कि दीवान का पद छोड़ दिया गया है और चूँकि उनके अनेक अनेक शत्रु हैं, "चिरक्कल" तक उनका अनुगमन करने केलिए एक छोटी सी पलटन भेज दी जाय। यद्यपि कर्णल ने तम्पी की बातों पर विश्वास नहीं किया फिर भी उनकी प्रार्थना के अनुसार कुछ सिपाहियों को आलप्पी भिजवा दिया। उस पल्टन का संचालन कार्य कर्णाटिक सेना का नायक दालीकर रहा था, जो दलवा के विश्वास पात्रों में एक था। सन् १८०८ दिसंबर के अन्तिम सप्ताह में आलप्पी में आकर दलवा से मिलने के बाद उसने रजिडेंट मैकाले के नाम जो पत्र लिखा, उसका संक्षेप नीचे दिया जाता है।

"आदरणीय कर्णल"

आप को यह बात भूली नहीं होगी कि दिसंबर तारीख २३ के दिन रात के आठ बजे मैं आप के गुमश्त को साथ लेकर आलप्पी केलिए

खाना हुआ। दूसरें दिन सबेरे आठ बजे यहाँ आकर हम दलवा तम्पी से मिले और आप का पत्र उन्हें दे दिया। ऐसा लगा कि वह पत्र पढकर उन्हें बडी प्रसन्नता हुई। उन्होंने वईकम पद्मनाभ पिल्लै को—अपने सेक्रटरी को—हमारे सामने ही आज्ञा दी कि झट इस्तीफे का पत्र तैयार किया जाय जो आप के द्वारा महाराज की सेवा में भेजा जाय। आप के गुमश्ता ने उसकी प्रतिलिपि उन से मांगी और बताया कि कर्णल की खुशी केलिए वह अत्यावश्यक है। मैं भी वही करता। जब हम कचहरी जा रहे थे, रास्ते में, मैंने गुमश्ता को याद दिलायी कि वह आप का आदेश दलवा को सुनाये। गुमश्ता ने दलवा से आप के आदेश के साथ यह भी कहा कि वह भी उनके साथ कोच्चिन जायेगा, यह कर्णल का हुक्म है। दलवा ने जल्दी में जवाब दिया कि इस की कोई ज़रूरत नहीं है। इसका सबब यह था कि मैं ही उनके साथ चलूँ। दलवा का जवाब देने का ढँग मेरे दिल को लग गया। मैं ने कहा, "जैसे आपने कहा", मैं ने कोच्चिन में कर्णल से बताया था। यह अच्छा हुआ, क्योंकि हमारी बातें सुनकर और हमारे भाव को देख दलवा को जो शक हुआ उसे इस से हम दूर कर सके।

मैं ने उन से पूछा, 'आप कब तक रवाना होना चाहते हैं?'

दलवा ने जवाब दिया, 'कल शाम को आठ या नौ बजे तक। दूसरे दिन सबेरे कर्णल कोच्चिन में मेरा इन्तज़ार कर सकता है।'

मैं ने गुमश्ता से कहा कि वह कर्णल को लिखे कि दो पालकियाँ -- एक दलवा केलिए और एक मेरे लिए—ज़रूरी हैं। मैं ने गुमश्ता से यह भी कहलाया कि उनके अनुज केलिए भी एक पालकी की ज़रूरत है।

दलवा ने जवाब दिया, 'पद्मनाभन अपना काम खुद कर लेगा। लेकिन एक बात, जब तक हम कोटुंगल्लूर पहुँचेंगे, चार चौकीदारों और एक जमादार को हमारे साथ कर देना अच्छा होगा, क्यों कि यह जान लेने पर कि मैं राज्य छोड़ कर जा रहा हूँ, नाते रिश्ते के लोग कोई सख्ती नहीं, न कर बैठें।'

गुमश्ता ने ऐसा ही करने का आश्वासन दिलाया और तब हम दलवा से विदा हुए।

नियत दिन शाम को मैं फिर दलवा से मिला। आज तो दलवा अधिक गंभीर दीख रहे थे।

सर्वाधि, वलिय-सर्वाधि, और अन्यान्य एकाध उच्च राजकर्मचारी उनके सामने बैठे थे। केवल मिर्च सर्वाधि वईकम पद्मनाभ पिल्लै वहाँ नहीं थे। क्षण भर के बाद दलवा ने मेरी ओर मुड़ कर कहा, 'आज तो बहुत काम है, कल आ जाना। अब तुम जा सकते हो।'

इस पर मुझे बड़ा अचरज हुआ। दूसरे दिन सबेरे मैं नहीं जा सकता था, शाम को ही मैं उन से मिल सकता था। मैं ने विनय पूर्वक निवेदन किया, 'आप की बातें मेरी समझ में नहीं आयीं। चूँकि समय बहुत कीमती है, और कर्णल मैकाले आप के आदेश के अनुसार कोच्चिन में आप का इन्तज़ार करेंगे, बातें साफ़ साफ़ समझ लेना चाहता हूँ।

दलवा ने कहा, 'कल का दिन अच्छा नहीं; शाम को आ जाना, तब तक कुछ तय करके बता दूँगा।'

मैं दूसरे दिन शाम को करीब सात बजे तक दलवा से फिर मिला। उन्होंने कहा, 'कल रात को नौ बजे तक रवाना होने केलिए मैं तैयार हूँ। तुम जा कर नाव बगैरह का इन्तज़ाम करो।'

आज तो तम्पी ने चट ही मुझे विदा किया। लौट कर मैं डेरे पर आया और जैसे दलवा ने कहा, मैं ने नाव वगैरह का इन्तज़ाम कर लिया। और तारीख दो को शाम के सात बजे तक, इस ख्याल से कि दलवा तैयार बैठे हैं, मैं उनके आगे हाज़िर हुआ। उन्होंने मुझे देखते ही पूछा, 'क्यों, क्या सब तैयार हैं?'

मैं ने कहा, 'आप ने जैसा कहा, सब कुछ ठीक कर लिया है।'

तम्पी, 'तो कब तक रवाना हो जाना है?'

मैं ने कहा, 'आप के हुक्म के हम इन्तज़ार में हैं।'

तम्पी, 'क्यों, क्या उनके वायदों पर तुम यकीन करते हो?'

मैं, 'जी हाँ, इस में क्या ही शक है?'

दलवा, 'कोटुंगल्लूर पहुँच जाने पर कर्णल मेरा बुरा नहीं चाहेंगे, इस पर कैसे यकीन किया जा सकता है?'

मैं, मेरे पास भरी बन्दूकें, हैं। ऐसी हालत में उन में से किसी को उठा कर अपनी

ही तरफ़ गोली चला लूँगा। बल्कि, मेरा पूरा यकीन है कि कर्णल आप से आदर के साथ व्यवहार करेंगे'।

तम्पी, 'तब क्या, कर्णल मैकाले सचमुच इस बात पर यकीन करते हैं कि मैं ज़रूर ही वहाँ पहुँच जाऊँगा?'

मैं, 'ज़रूर।'

दलवा, 'तो वह बड़ा बेवकूफ़ है। मेरा ख्याल था कि वह एक समझदार आदमी है। अभी मालूम हुआ कि वह एक दावूदी है, वह मेरी बातों पर यकीन करता है! मैं वेणाड का दलवा हूँ। वह इस पर कैसे यकीन कर सका कि मैं अपने राजा और राज्य को छोड़ कर कम्पनी वालों के राज्य में जाकर रहूँगा। ऐसा कर के मैं राजा और राज्य के प्रति कभी द्रोह नहीं करूँगा। मैं साफ़ साफ़ कहे देता हूँ, कर्णल मैकाले को खुश करने केलिए मैं अपने राज्य को कभी न छोड़ूँगा। कर्णल चाहता है कि मैं ज़रूर ही इस राज्य को छोड़ दूँ। वह सोचता होगा कि ऐसा करने से इस राज्य का सारा अधिकार उस के हाथ लग जायेगा। उसने मुझे लिखा भी है कि

में कर्णाटिक सेना को विघटित कर दूँ। लेकिन वह मुझे आदेश देनेवाला कौन होता है? बल्कि अब मैं उसका मुकाबिला करने केलिए सेना के और पाँच दस्ते जुटाने जा रहा हूँ।'

मैं ने उनको समझाया, ऐसी हालत में आप अपनी जान से और राजा अपने राज्य से हाथ धो बैठेंगे।'

दलवा, 'मेरे पास अब एक लाख पचास के करीब सिपाही हैं। उधर मरहट्टे कंपनी वालों के खिलाफ़ लडने की तैयारी में हैं। फ्रांसीसी और रूसी पारसीक देश से होकर इधर को निकल चुके है और जल्दी ही वे यहाँ पहुँच जाएँगे। अंग्रेज़ों को उन सब का मुकाबिला करना पडेगा। यही नहीं, मैं ने मदुरा के पालिगारों और कण्ण-न्नूर के मापिलाओं को सिपाही भिजवा देने केलिए लिखा भी है। लड़ाई शुरू होते ही वे सब आ जाएँगे।'

मैं ने कहा, 'कम्पनी वाले सारे हिन्दुस्तान को अपने काबू में किये हैं। सिर्फ़ वेणाड शेष है। उनका लोहा सब मान गये हैं। यही नहीं; फ्रांसी-सियों और रूसियों की खबर जो आप को लगी

है, भ्रमपूर्ण है। पालिगार लोग ऐसे बेवकूफ नहीं है कि आप के साथ मिलकर अंग्रेज़ों की ताकत के विरुद्ध लडाई लडें। वे तो अंग्रेज़ों की ताकत बेखूबी जानते हैं। दस पाँच दिन में अंग्रेज़ों की फेज इस राज्य पर काबू कर लेगी तो आप जानें। आप को अपनी जान खोदेनी पडेगी।'

तम्पी, 'लडाई शुरू होने पर भी समझौता कर लेना मामूली सी बात है, सो मैं ने लडाई करना ही तय कर लिया है।'

मैं ने उन्हें समझाते हुए फिर कहा, 'आप की बातें सही हैं; मगर आप यकीनन मान लें कि लड़ाई शुरू होने के बाद अंग्रेज़ लोग आप से समझौता कभी न करेंगे।'

अब दलवा जोश से भर गये और वे बोले, 'मैं युद्ध करूँगा, नाम कमाऊँगा और तब मर भी जाऊँ, कोई हर्ज़ नहीं।'

मैं, 'अगर आप की यही मँशा थी, तो फिर मुझे कई बार रजिडेंट के पास क्यों भेजा था?

दलवा, 'यह? यह तो समय निकालने केलिए था?

मैं, 'मैं ने आप पर यकीन किया और

मैकाले को समझा बुझा कर राज़ी करने में मैं ने बहुत से कष्ट सहे भी। अब वे क्या समझेंगे।'

दलवा, 'ओ हो, तुम कर्णल मैकाले की बातें कर रहे हो? अब तक वह ज़हन्नुम में पहुँच गया होगा। उसका सर अब कोचिन की गलियों में लुढ़कता होगा।'

"दलवा की बातें सुन कर मैं कांप उठा। मैं ने कहा," 'शायद वही अन्त मेरा भी हो। कर्णल मैकाले से आप ये जैसा फायदा किया था, मेरा ख़्याल था, आप ज़रूरी ही जायेंगे। लेकिन आपने तो मैकाले और मुझ को दोनों को एक साथ धोखे में डाल दिया। मैं अपनी सारी पूँजी कर्णल के बंगलों पर छोड़ आया हूँ। आप के आदमियों ने सब कुछ लूट लिया होगा। मालूम होता है कि अब मेरी भी जान की खैर नहीं है। और यह सब हो रहा है, आप की बातों पर यकीन करने से।'

दलवा, 'मैं तुम्हारा कुछ न बिगाड़ूँगा। बस इतना ही कि तुम्हें अपने घर में हिरासत में रखा जायेगा। खैर, तुम कितना पैसा कर्णल के बंगलों पर छोड़ आये हो?

मैं, 'करीब बारह हज़ार रुपया।'

दलवा, 'तुम्हें वह पूरी रकम मिल जायेगी। बारह हज़ार रुपया मैं तुम्हें दलवा दूँगा। अभी हुंडी लिखवा देता हूँ।'

मैं ने कहा, 'मुझे न तो हुंडी चाहिए, न और कुछ। मुझे तो चाहिए सिर्फ़ यह कि मेरी जान न ली जाये।'

"तुरन्त मैं कमरे से बाहर आया। मेरा ख्याल था, घर पर पहुँचने से पहले मेरा काम तमाम किया जायेगा। बाहर आकर मैं थोडी देर तक वाम्दे में उनका इंतज़ार करता रहा। दलवा बाहर आये। मैं ने उठ कर उन्हें सलाम किया और उन्होंने मुझ से हाथ मिलाया। और कहा, तुम 'घबड़ाओ मत।'

'लेकिन मैं ने उनकी बातों पर विश्वास किया। क्षण भर में सेना के कूच का डँका बजने लगा। मेरे देखते ही सेना आगे बढी। दलवा उसके साथ हो लिए।'

'वहाँ से मैं सीधे अपने डेरे पर लौट आया। दलवा ने जैसा कहा, हुण्डी पहले ही वहाँ पहुँचायी गयी थी।'

दाली की उक्त डयरी से अनुमान करना होता है कि तम्पी ने मलबार के धनीमानी लोगों और फ्रांसीसियों तथा मरहट्टों के सहयोग से अंग्रेज़ों को हिन्दुस्तान से मार भगाने का निश्चय किया था। यह बात उतनी अव्यावहारिक भी नहीं थी। मरहट्टे अपनी अधोगति में असंतुष्ट थे और प्रतिशोध का मौका ताक रहे थे। मलबार के मापिलाओं और सामन्तों का भी यही हाल था। फ्रांस तो खुले आम ब्रिटीश राज के विरुद्ध लड़ रहा था। फ्रांस का सहयोग-प्राप्त मलबार—मरहट्टा संबन्ध ब्रिटीश शक्ति का समूल नाश करने में समर्थ था। डाक्टर सेन का यह कथन यहाँ उल्लेखनीय है कि वेलूतम्पी की सेना में कई ईमान्दार फ्रांसीसी अफ़सर काम करते थे। कर्णाटिक दस्ते में जो 'लफ़ोबें' और 'अलयर' काम करते थे, तम्पी के प्रोत्साहन के पात्र थे। सितंबर तारीख ११ को दो एक फ्रांसीसी अफ़सर आलप्पी के बन्दरगाह पर उतरे, जिस की खबर यथासमय कर्णल मैकाले को लग गयी। तम्पी ने सैनिक सहायता की प्रार्थना करते हुए अपने दो विश्वस्त मुसलमानों को मालद्वीप के किसी जहाज़ पर मोरीशियस भेजा भी था। दिसंबर तारीख इक्कीस को मैकाले ने महाराजा के नाम जो पत्र भेजा, उस में लिखा

था कि लोग कहते हैं कि फ्रांसीसी और मरहट्टों से गुप्त रूप से महाराजा को सहायता मिल रहीं है। यूरोप में फ्रांसीसियों की जो तात्कालिक जीत हुई, उसकी अतिरंजित रिपोर्ट तंपी को मिल रही थी। साथ साथ लोगों में सब कहीं यह अफ़वाह हो रही थी कि एक फ्रांसीसी दस्ता वेणाड के किसी बन्दर गाह पर बिना विलंब उतरने वाला है।

तंपी की प्रार्थना पर मैकाले ने जो फ़ौजी टुकड़ा आलप्पी भिजवा दिया, उसके वहाँ पहुँचने के पहले ही तंपी की आज्ञा के अनुसार वाईकम पद्मनाभ पिल्लै एक टुकडी को साथ लेकर कोच्चिन को रवाना हो चुका था। उधर अच्चन के आदेश में एक सुशक्त सेना ने रजिडेंसी को आ घेरा। रजिडेंट भूगर्भ में कहीं छिप कर बच गया। बहुत कुछ ढूँढने पर भी जब रजिडेंट नहीं मिला तो अच्चन बडे निराश हुए और उस निराशा में उन्होंने वहाँ की सारी चीज़ें तोड फ़ोड डालीं। मौका पाकर रजिडेंट किसी तरह भाग निकला और एक जहाज़ पर किनारे से बहुत दूर निकल गया।

इस आशा से कि अच्चन का प्रयास सफ़ल हुआ है, तंपी आलप्पी से सीधे कोल्लम पहुँचे। सन् १८०४ जानवरी पहली या दूसरी तारीख को तंपी

की सेना ने कोल्लम में ब्रिटीश सेना पर चढाई कर दी। यह लड़ाई केवल तीन दिन तक रही। इस का फ़ल तम्पी के अनुकूल नहीं था। लेकिन वे हताश न हुए; बलकि अंग्रेज़ों को हराने का फ़िर से यत्न आरंभ कर दिया। इस सिलसिले में तारीख पन्दरह को आप 'कुण्टरा' पहुँचे और इतिहास प्रसिद्ध वह घोषणा प्रसरित की जिस का संक्षेप नीचे दिया जाता है—

"यह समझ कर कि वेणाड का अस्तित्व विपत्ति में गिरा चाहता है, उसको बनाए रखने के अर्थ जो प्रयत्न किये गये और जो योजनाएँ की गईं उनका विवरण यहाँ के राज्य स्नेहियों और राजभक्तों की, ब्राह्मणों और राजकर्मचारियों की, शूद्रों और अच्छूतों की जानकारी के निमित्त घोषित किया जा रहा है।"

"तब से लेकर, जब कि परशुराम ने इस राज्य की स्थापना की, और जब से लेकर चेरमान पेरुमाल के वंशज इस राज्य पर शासन करते आये और उसके अनन्तर जब से तृपादस्वरूप वंश के राजेश्वरों ने राजदण्ड संभाला, अब तक इस राज्य की ओर से किसी तरह के झगडे-फ़िसाद या पूछ-ताछ की नौबत नहीं हुई है। सन् १७४८ में जो महाराजा वीर मार्त्तण्ड वर्मा स्वर्ग को प्राप्त हुए अपनी दूरदर्शिता से यह जान कर कि राज्य के उत्तराधिकारियों को राज-काज संभालन ने की उतनी

ताकत और लियाकत न रहेगी, अक्षतपुष्प और गंगा-जल के साथ राज्य को इष्टदेव श्री. पद्मनाभ के श्री चरणों में बडी श्रद्धा भक्ति से अर्पण कर दिया, सो आप को मालूम है। उसके साथ ही साथ यह भी तय किया गया कि भविष्य में सिंहासन पर बैठने-वाला प्रत्येक महाराजा श्री पद्मनाभ का प्रतिपुरुष अपने को मान ले, राजभोग के भाग्य से बढ कर तपोनिष्ठा और व्रतनियमों को श्रेष्ठ समझ, स्वयं दुःख झेल कर भी प्रजा को सुख देने में कोई बात उठा न रखे, और आगे भी राज्य के कल्याण केलिए भगवद्सेवा और "भद्रदीप", 'मुरजपम्' और "अन्नसत्र" आदि सत्कर्मों को करते हुए शासन चलाये। और यह सब नित्य निर-न्तर करते आने के कारण अब सारी प्रजा सुखी और प्रसन्न है और यह भी सब को विदित है कि आसेतु हिमाचल वेणाड ऐसी दूसरी कोई धर्मसंस्था नहीं है।"

"आर्काट के नवाब मुहम्मद अलीखाँ ने त्रिचना-पल्ली और "दक्षिण शीमा" को जीत लिया, मगर उन्होंने हमारी मित्रता मात्र चाही, इस केलिये केवल सलाना छः हज़ार रुपये और एक हाथी देने को हमें लिखा। इस राज्य को नवाब से कोई झगडा नहीं करना पड़ा। बाद में टीपू सुलतान और इंकिरीस कम्पनी वाले आये और यह सोच

कर की इन में से इंकिरीसों पर यकीन करने से कोई हानि न होगी और वे हमें धोखा नहीं देंगे, पहले पहल "अंचुतेंग" में किला बनवाने की आज्ञा देकर इस आशा से उन्हें वहाँ बसा दिया कि वे हमारी सहायता करेंगे। इसी कारण हम ने टिपू का मुकाबला किया और इंकरीसों से दोस्ती की। उसके बाद ही अनेक कारणों से यह जान पडा कि इन से की गयी दोस्ती नाश और इन पर किया गया विश्वास दोष का कारण है। अभी मालूम हो सका है कि यह लोग प्रपंच और कपट, दूषण और विश्वासघात से भरे पूरे हैं और इनकी जाति ऐसी दूसरी कोई जाति अब तक नहीं हुई है और आगे होगी भी नहीं।"

"इन इंकिरीसों को जिस नवाब ने शरण देकर इतना प्रबल बना दिया, उसको धोखे में डाल कर और उसकी शक्ति क्षीण कर के तथा उसके वंश का मूलच्छेद कर के, पास पडोस के राज्यों में प्रकाशित दीपों को बुझा डालकर और श्रीसंपन्न महलों प्रासादों को उजाड़ डालकर उसी कपट-नीति के मार्ग से इस जनपद में भी प्रवेश कर, आरंभ में साम से और पीछे दंड से शुरू कर के अब सर्वस्व स्वाहा करने पर तुले हुए हैं।"

"इन बातों को संक्षेप में बताकर हम यह

स्पष्ट किया चाहते हैं कि टीपू सुलत्तान से लोहा हमें जो लेना पड़ा, इसलिए मदद केलिए इन का साथ करना पड़ा। मौका पाकर हमें धोखा देकर ये दस लाख "वराहन" हम से हड़प कर ले गये। आगे चल कर नय और लोभ दिखा कर हमें विवश कर दिया और अब हमें सालाना छः लाख रुपया इनको देना पड रहा है। यह कह कर की जब तक इंकिरीस जाति और वेणाड रहेंगे, यही रकम लेते रहेंगे, एक पैसा भी ज़्यादा न माँगेंगे और इस शर्त पर कि राज्य-शासन के कार्य में हस्तक्षोप न करेंगे, सन् १७८४ में कसम खाकर संधिपत्र में उन्होंने हस्ताक्षर भी किए।"

"संधिपत्र की शर्तों को मान कर ज़रा भी इधर उधर किये बिना हम नियत रकम अदा करते आये तो शर्तों के खिलाफ़ उन्होंने इस राज्य में रजिडेंट को लाकर बसा दिया। उसके अत्याचारों को और 'कोल्लम' के बन्दरगाह पर उतरी तीन इंकिरीस पलटनों की सख्तियों को भी सह कर, और साँप को दूध ऐसे, उनके रहने केलिए किले और घर बनवा देकर भी, हम नित्य प्रति उनकी अनी-तियों को देखते आये। लेकिन हमारी ओर से कहीं कोई भूल चूक न हो, ऐसा सोच कर हम सावधान रहे। दूसरे दफ़े सन् १८०५ जानवरी में ऐसी धमकी देकर कि दो लाख रुपया और दे दें, अन्यथा लड़ाई लड़ने की नौबत आ जायेगी, उन्होंने अन्याय से चारों

और तोप खाने उतार कर लडाई की सारी तैयारियाँ कर लीं तो दूसरा कोई चारा न पाकर और युर्दैव मान कर उनके कहेनुसार दो लाख और देने को हम विवश हुए।"

"अब तो उस से भी आगे आकर उन्होंने ऐसे नियम बना रखे हैं जिन के द्वारा हमें आदेश दिया गया है कि इस राज्य की सेना को विघटित किया जाय, ईश्वर सेवा और अन्नसत्र आदि सद्-कर्मों को बन्द कराया जाय और इन बातों केलिए जो धन खर्च किया जा रहा है, उनको दिया जाय और इस राज्य की हर बात रजिडेंट मैकाले से स्वीकृति लेकर तम्पी संभाल लें। इंकिरीसों की सेवा में दुखडा रोने पर भी, उन से अनुनय विनय करने पर भी कि उन के विरुद्ध कोई कार्य इस राज्य में नहीं होगा, वे किसी तरह नहीं मानते। यही नहीं, मैकाले ने इस आशय का एक पत्र महाराजा के नाम भिज़वा भी दिया है कि पिछले महीने में हमें जो कागज़ दिया गया उसके विरुद्ध हम काम करते हैं, सो हम इस दीवानी को छोड़ कर चले जाएँ, अपने परिवार के लोगों और एकाध कर्मचारियों को साथ लेकर कंपनी के राज्य में जाकर रहें, पेनशन वगैरह हमें वहीं मिल जाएँगे और इधर मैकाले खुद

राजकाज़ संभाल लेने को तैयार हैं, ऐसा करने में विलंब होगा तो युद्ध किया जायेगा। उस पत्र का जवाब देने पर कि चाहे प्राणों पर संकट आ जाय, फिर भी राजा या राज्य के प्रदि ऐसा द्रोह हम नहीं कर सकते, राजा या राजकर्मचारियों से बिना कुछ कहे सुने रजिडेंट ने समुद्र के मार्ग से और कुछ सोलजरों को कोल्लम में उतार कर और उनकी अपनी स्त्रियाँ जो वहाँ रहती थीं उनको और धन सम्पत्ति को वहाँ से हटाकर लड़ाई आरंभ कर दी है।"

"इस जनपद ने इस से पहले कभी या अब भी उस से लडाई लडने की नहीं सोची है। लेकिन अब उन्होंने लडाई जो शुरू कर दी है, उसका मुकाबला न करने पर जो विपत्तियाँ होनेवाली है, हम सह न सकेंगे। इसलिए संक्षेप में इतना ही लिखा जाता है कि धोखे या फूट डाल नीति से राज्य को अपने अधीन कर लेना उनकी रीति है, और किसी तरह राज्य उनके अधीन चला गया तो फिर महल, प्रासाद, दुर्गद्वार सब कहीं इंकिरीसों का पहरा और हुक्म चलने लगेगा, राज-दण्ड और राज—मुद्रा, पालकी और पुरुषार्थ सब का आदर घट जायेगा, देवालय और ब्रह्मालय संबन्धी नियमों को

बन्द कर के और दिहाती जमातों को विघटित कर के, नमक आदि सभी नित्योपयोगी पदार्थों पर चुँगी लगा कर और, खाली पडी हुई सारी भूमि को नपवा कर और उस पर कर लगवा कर, भूमि-कर, केर-कर आदि अतिरिक्त करों को भी गरीब आसामियों पर लगवाकर तथा उन से कोई भूल हुई तो दुष्टों से उन्हें दंड दिलवा कर और देवमंदिरों में क्रूश की स्थापना करा कर और वहाँ यूनियन पताका फ़हरा कर, और वर्ण-भेद का तिरस्कार और ब्राह्मण-स्त्रियों का अपमान करके अधर्म के नियम चलायेंगे।"

"इसलिए यह सोच कर कि इस वेणाड में उक्त दोषों में से कोई दोष और राज्यवासियों की मान-मर्यादा में कोई हानि होने न पाये और इस अपयश से अपने को बचाने केलिए कि इस केलिए मनुष्य-प्रयत्नों में कहीं कोई कमी कर दी, अपनी शक्ति भर प्रयत्न नहीं किया और यह मान कर की किसी भी यत्न का फल ईश्वर की इच्छा पर निर्भर है और जो हो सो सहन करना ही उचित है, हमें उनका मुकाबिला करना पड़ रहा है।

"इति कुंटरा में—दलवा तम्पी चेम्पकरामन वेलायुधन।"

इस में सन्देह नहीं कि उक्त घोषणा-पत्र महान

देश स्नेही वीरवेलू तम्पी की पवित्र राज्यभक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण है। तंपी की घोषणा को यद्यपि एक सौ वर्ष हुए, फिर भी उस में जिन बातों की सूचना दी गयी है, आज भी यथार्थ दिखायी देती है।

तंपी की घोषणा से जिस फल की प्रतीक्षा की गयी, तत्काल ही प्राप्त हुआ। सारी जनता उमड़ उठी। तम्पी की आज्ञा पर प्राणों की आहुति देने केलिए भी वेणाडी लोग तैयार हो गये। दलवा लौट कर फिर कोल्लम में पहुँचे और अंग्रेज़ों के खिलाफ़ लडाई जारी रखी। इस पारी की लडाई में भी अनुभव हीन वेणाडी सेना को हार खानी पडी तो इस में आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है। कोच्चिन की लडाई में भी मैदान अंग्रेज़ों के हाथ रहा। तंपी के घोषणा-पत्र को पढ कर क्षुब्ध हुई वेणाडी जनता को शांत करने के हेतु ता० १४ को अंग्रेज़ों ने अपना एक घोषणा-पत्र निकाला। पहले ही मद्रास सरकार को इस बात का पता लग गया था कि वेणाड में हुई सभी गड़बड़ियों का कारण रजिडेंट मैकाले को हटा कर उसके स्थान पर दूसरे किसी को नियुक्त कर, यहाँ भेजने का विचार हो रहा था तभी उक्त घटनायें घटीं। अब जब कि अंग्रेज़ों को घबड़ाने की कोई बात न रही, उन्होंने नयी नियुक्ति पर ध्यान ही नहीं दिया, बल्कि उसकी प्रार्थना पर आवश्यक सेना भिजवा दी। इस बीच

में पालियत्त अच्चन को भी मुँह की खानी पडी। सन् १८०४ फ़रवरी ता० छः को सेन्ट लेजर के आदेश में ब्रिटीश सेना की एक सुशक्त टुकडी वेणाड की पूर्व सीमा पर "आरुवामोषी" की घाटी में आ पहुँची। इधर पुनच्चल वल्यजमान के नेतृत्व में वेणाडी सेना ने अंग्रेज़ों का सामना किया। वेणाडी सेना के तोपखाने से निकले गोलों ने शत्रुसेना को बडी हानि पहुँचायी। बिना विलंब अंग्रेज़ अफ़सरों को मालूम हुआ कि इन वेणाडी सिपाहियों को, जो कि पाश्चात्य ढंग से युद्ध विद्या सीखे हुये हैं और तोपों का प्रयोग करने में समर्थ हैं, हराकर किले पर कब्जा कर लेना बायें हाथ का खेल नहीं है। अतः धोखा देकर किला जीतने के उपाय वे ढूँढने लगे। इस बीच में तिरुनेलवेली के रहनेवाले दो मरवों ने किले के अन्दर घुसते का गूढ मार्ग उन्हें बता दिया। अंग्रेज़ों ने मरवों को बहुत सा धन दे दिया। किला जहाँ पहाडी से लगा था, वहाँ पहुँच कर उधर से किले पर हमला किया जा सकता है, ऐसा वेणाडी सरदारों ने स्वप्न में भी नहीं सोचा। तारीख नौ को आधी रात के समय जनरेल वेलश के आदेश में शत्रु सेना की एक टुकडी उन मरवों के बताये मार्ग से चल कर किले के दखिन की ओर जहाँ किला पहाडी से मिलता है, घुस आयी। धोखे की बात मालूम होते ही पुनच्चल वल्यजमान ने बडी वीरता और साहस के साथ शत्रु सेना का मुकाबला करना आरंभ कर दिया।

लेकिन इस बीच में उन पर और एक विपत्ति टूट पडी। कौन जाने, यह भी धोखे ही का फल नहीं था। इस युद्ध में वेणाडी सेना केलिए आवश्यक गोले गोलियाँ उदय-गिरि दुर्ग से मंगायी जाती थी। आखिरी बार जो गोले लाये गये, सो तोपों के नाप के नहीं थे। बेनाप के गोलों का इस्तेमाल कैसे किया जा सकता था। यह देख कर वल्यजमान बडे हताश हुए। फिर भी साहसी उन देशाभि-मानी ने आज्ञा निकाली कि पास के पद्मनाभपुरम के राज-खजाने में पडे चान्दी के सिक्कों का गोलों की जगह इस्ते-माल किया जाय। चान्दी पिघल कर जब तोपों के मुँह से बाहर बहने लगी तो शत्रुओं ने अंनुमान से सही बातें समझ लीं और अब उन्होंने अभूतपूर्व साहस और वीरता के साथ युद्ध ज़ारी रखा। यह देख लेने से पहले की किला शत्रुओं के हाथ चला गया, और वेणाड को हार खानी पडी, वल्यजमान ने आत्मघात कर लिया। वीर नेता के अभाव में शत्रुओं का शक्तिशाली आक्रमण न सह सकने के कारण हताश हुई वेणाडी सेना से पीछे हटने लगी और आखिर खिला छोड प्राणों को लेकर भाग निकली। तारीख़ दस को अंग्रेज़ सेना ने आरुवामोषी के किले पर कब्जा कर लिया। अब वे जीत का डंका बजाते हुए त्रिवेंत्रम को निकले। मार्ग में उन्होंने बहुत से अन्याय और अत्याचार किये जिनका वर्णन स्थानाभाव के कारण यहाँ नहीं किया जाता है।

छः

वेलू तंपी ने त्रिवेंत्रम पहुँच कर महाराजा के दर्शन किए और सेवा में प्रार्थना की कि उनके सारे अपराधों को वह क्षमा कर दे। राजा से उन्होंने यह भी प्रार्थना की कि वह किसी हालत में अंग्रेज़ों का विरोध—पात्र न बने, जो हुआ सो तम्पी के कारण हुआ कह कर वह अपनी और राज्य की रक्षा कर ले। इसके प्रमाण-स्वरूप आवश्यक कगज़ात तैयार करके राजा को सौंप दिये और हृदय से वेणाड के अभंगुर कल्याण की कामना करते हुए तम्पी ने विदा ली। ईमानदार मंत्री-सत्तम के वियोग में राजा अत्यन्त दुखी हुए।

बाद की करुणापूर्ण घटनाओं का वर्णन किया नहीं जा सकता। तम्पी के निर्देश के अनुसार महाराजा ने सब कुछ किया और उनकी जगह मार्त्तांडन इरवि ऊर्फ़ 'उंमिणी तम्पी' को दीवान नियुक्त किया। लेकिन अब सरकार की ओर से, रजिडेंट के अनुरोध पूर्ण आग्रह पर वेलू तम्पी को ढूँढ निकालने का कार्य आरंभ कर दिया गया। यह विज्ञापन किया गया कि उन्होंने पकड़ कर सौंप देनेवाले को पचास हज़ार का इनाम दिया जायेगा। उधर वेलू तम्पी अनुज पद्मनाभन तम्पी को साथ लेकर त्रिवेंत्रम से उत्तर की ओर भागे जा रहे थे। भागते रास्ते में एक दिन की रात उन भाइयों ने किलिमानूर के राजभवन में बितायी, जो कि वेणाडी राजाओं का मूलवंश समझा जाता है। उस समय महल में कोई वयस्क राजकुमार नहीं था। बडी रानी के पति ब्राह्मण देवता ने उनका यथोचित आतिथ्य किया। कृतज्ञ-तानिर्भर वेलू तम्पी ने अपनी जान से भी प्यारी नौरत्न जटित तलवार उन्हें उपहार-स्वरूप भेंट की और भाई को साथ लेकर आगे बढे। उक्त तलवार आज भी उस महल में सुरक्षित रखी गयी है और पिछले महीने में जो प्रद-र्शनी नायर सर्वीस सो सेइटी के तत्वावधान में पेरुन्ना में संगठित की गयी उस में दिखायी गयी थी। दोनों वीर भ्राता भागे बढे जा रहे थे। वे चटयमंगलम गाँव में पहुँचे और कटयाट्टिजमान नामक मांत्रिक का पता लगाया।-

लेकिन खेद है कि दो ही एक दिन हुए, उस का देहा-वसान हो गया था। अब तम्पी एक दम हताश हुए और आगे बढकर वाक्का वंजिघुषा नामी जागीरदार के अधी-नस्थ मंणटि गाँव में पहुँचे। मंणटि के देवमंदिर में प्रति-स्थापित भद्रकाली तम्पी की इष्टदेवी थी। उन्होंने अपने अनुज के साथ देवी की वन्दना की और वहाँ की 'कलरी' में रह कर उस समय तक अप्राप्त आराम का आस्वादन किया। मंदिर का पुजारी जो स्वतः तम्पी का आदर करना पवित्र कार्य समझता था, तम्पी की सेवा शुश्रूषा में निरत रहा। दो एक दिन बिना किसी विशेष घटना के बीत गये। इस बीच में कार्यकार नट्टालम मल्लन पिल्लै के आदेश में राज्यद्रोहियों का एक दल तम्पी की तलाश में मंणटी में आ धमका। इस की खबर लगने पर कि शत्रु लोग निकट पहुँच गये हैं और यह जान कर कि अब उनके चँगुल से बच कर निकल भागना कठिन है, पुरुष-केसरी वीर वेलूतम्पी ने कटार भोंक कर अपनी छाती विदिर्ण कर डाली। लेकिन, फिर भी देही जब देह से अलग नहीं हुए तो आप के अनुरोध पूर्ण आग्रह से अनुजने अपनी तल-वार से वारकर के उनके प्राणों केलिए मार्ग प्रशस्त कर दिया। इस तरह वेणाड का पौरुष सदा केलिए समाप्त हो गया।

इस गटना के बाद ही शत्रु मंदिर का दरवाज़ा तोड़ कर गर्भ गृह में प्रवेश कर पाये, जहाँ कि तंपी अंतिम

क्षणों में बैठ कर अपने अनुज से बातें कर रहे थे। तंपी की गरम लाश को देख मल्लन पिल्लै बडी निराश में पड़ गया, इसलिए कि वह जीवित तंपी को फँसा न सका। फिर भी उस दुष्ट ने तंपी की लाश के साथ साथ पद्मनाभन तंपी को भी मैकाले के आगे भेंट किया। विवेकहीन असभ्य रजिडेंट ने राज-भक्त और अभिमानी वीर पुरुष वेलूतंपी के शवशरीर को निर्दयता पूर्वक कंणन मूलै की फांसी पर लटकवा दिया। वेलूतंपी के अनुज पद्मनाभन तंपी को कौलुम में ब्रिटीश सेना के आगे फ़ांसी पर चढा कर मार डाला गया। तंपी के अनुचर वइकम पद्मनाभ पिल्लै और कुंचुकुट्टी पिल्लै आदि वीर देश भक्तों को पाशविक ढंग से रजिडेंट ने मरवा डाला और उनकी सारी धनसंपत्ति जब्त करा ली। दलवा वीर वेलूतंपी का विशाल भवन ढहा दिया गया और हाथ लगे सब को - क्या पुरुष, क्या स्त्री, क्या लडका, क्या वृद्ध - मिट्टी में मिला दिया गया। दलवा के सगे संबन्धियों में कोई आज जीवित नहीं है।

APPROVED
HINDI LIBRARY BOOKS
for School Libraries

Sarayu Bala	Vidwan Andoor	0	75
Meeti Kahaniyam	,,	0	60
Manoranjak Kahaniyam	,,	0	75
Foolom Ka Har	,,	0	75
Bharat Ki Veer Ramaniyam	-P. M. Baskaran B. A.	0	60
Adarsha Balak Part I	P. G. Vasudev	0	50
,, Part II	,,	0	50
,, Part III	,,	0	60
Mahan Purush Part I	,,	0	50
,, Part II	,,	0	50
,, Part III	,,	0	50
Bal Kahaniyam Part I	,,	0	50
,, Part II	,,	0	50
,, Part III	,,	0	50
Adarsa Purush Part I	,,	0	50
Veer Veluthampi	,,	1	00
Hamare Rashtra Netha	,,	0	50
High School Hindi Grammar & Composition	- V. V. Raghavan Nair	1	00

VIDYARTHI MITHRAM - KOTTAYAM.

॥ वीर वेलू तम्पी ॥

(जीवनी)

4781
4701

लेखक
पी. जी. वासुदेव

Price Re. 1

विद्यार्थी मित्रम बुक डिपो,
कोट्टयम ।

Indic Digital Archive Foundation
gpura.org